14

शुन:शेपोपाख्यान-3

प्रस्तावना

पूर्व पठित पाठ से जैसा कि स्पष्ट है कि ऋग्वेद का शुन:शेपोपाख्यान अत्यन्त प्रसिद्ध है। आपने पूर्व के दो पाठ में शुन:शेपोपाख्यान के चार खंडो को पढ़ा। अत एव खण्ड चतुष्टय के अध्ययन से शुन:शेपोपाख्यान का साधारण ज्ञान तो आपको हो ही गया है। अब इस पाठ का अवशिष्ट भाग इस पाठ में मिलेगा। मन्त्र, कथा माध्यम द्वारा एक वृत्तान्त को पादित किया है। ऋग्वेद का यह मूल आख्यान अत्यन्त प्रसिद्ध है। इस पाठ में शुन:शेपोपाख्यान का पञ्चम खण्ड वर्णित है। इस पाठ में सायण भाष्य के आधार पर व्याख्या है। क्योकि सायण भाष्य के विना मन्त्र का अर्थ समझना बहुत कठिन है। इस पाठ में विश्वामित्र और शुन:शेप के मध्य में प्रवृत्त वार्तालाप का वृत्तान्त है और शुन:शेप को विश्वामित्र द्वारा पुत्र रूप में स्वीकारना ये भी वृत्तान्त है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे-

- शुन:शेपोपाख्यान के पञ्चम खण्ड को जान पाने में;
- शुन:शेप और विश्वामित्र के वार्तालाप को जान पाने में;
- शुन:शेप को विश्वामित्र द्वारा क्यों पुत्र रूप में स्वीकार किया गया ये जान पाने में;
- स्वयमेव मन्त्र की व्याख्या सम्पादित करने में;
- स्वयमेव अन्वय कर पाने में;
- मन्त्र में स्थित व्याकरण को भी जान पाने में;
- मन्त्र का सामान्यार्थ जान पाने में।

टिप्पणी

14.1 मूलपाठ

पञ्चम खण्ड

तमृत्विज ऊचुस्त्वमेव नोऽस्यानहन: संस्थामधिगच्छे-
त्यथ हैतं शुन:शेपोऽञ्:सवं ददर्श तमेताभिश्चतसृ-
भिरभिसुषाव यच्चिद्धि त्वं गृहे गृह इत्यथैनं द्रोण-
कलशमभ्यवनिनायोच्छिष्टं चम्वोर्भरित्येतयर्चाऽथ
हास्मिन्नन्वारब्धे पूर्वाभिश्चतसृभि: स स्वाहाकारा-
भिर्जुहवांचकाराथैनमवभृथमभ्यवनिनाय त्वं नो
अग्ने वरुणस्य विद्वानित्येताभ्यामथैनमत ऊर्ध्वम-
गिन्माहवनीयमुपस्थापयांचकार शुनश्चिच्छेपं निदितं
सहस्रादिति इति।

अथ ह शुन:शेपो विश्वामित्रस्याङ्कमाससाद स
होवाचाजीगर्त: सौयवसिर्ऋषे पुनर्मे पुत्रं देहीति
नेति होवाच वि श्वामित्रो देवा वा इमं मह्यमरास-
तेति स ह देवरातो वैश्वामित्र आस तस्यैते कापि-
लेयबाभ्रवा:इति।

स होवाचाजीगर्त: सौयवसिस्त्वं वेहि विह्वयावहा
इति स होवाचाजीगर्त: सौयवसिराङ्गरसो जन्म-
नाऽस्याजीगर्ति: श्रुत: कवि:। ऋषे पैतामहात्तन्तो-
र्माऽपगा: पुनरेहिमामिति स होवाच शुन:शेपोऽ-
दर्शुस्त्वा शासहस्तं न यच्छूद्रेष्वलप्सत। गवां
त्रीणि शतानि त्वमवृणीथा मदङ्गर: इति।

स होवाचाजीगर्त: सौयवसिस्तुद्वै मा तात तपति
पापं कर्म मया कृतम्। तदहं निह्नुवे तुभ्यं
प्रतियन्तु शता गवामिति स होवाच शुन:शेपो य:
सकृत्पापकं कुर्यात्कुर्यादेनत्ततोऽपरम्। नापागा:
शौद्रान्न्यायादसंधेयं त्वया कृतमिति इति।

असंधेयमिति ह वि श्वामित्र उपपपाद स होवाच
वि श्वामित्रे भीम एव सौयवसि: शासेन विशिशा-

टिप्पणी

सिषुः अस्थान्मैतस्य पुत्रो भूर्ममैवोपेहि पुत्रता-
मिति, इति।

स होवाच शुनःशेपः स वै यथा नो ज्ञपयाऽऽ
राजपुत्रे तथा वद। यथैवाऽऽङ्गिरसः सन्नुपेयां
तव पुत्रतामिति स होवाच वि श्वामित्रो ज्येष्ठो मे
त्वं पुत्रणां स्यास्तव श्रेष्ठा प्रजा स्यात्। उपेया-
दैवं मे दायं तेन वै त्वोपमन्त्रय इति इति।

स होवाच शुनःशेपः संज्ञानानेषु वै ब्रूयात् सौहार्द्याय
मे श्रियै। यथाऽहं भरतऋषभोपेयां तव पुत्रतामि-
त्यथ ह विश्वामित्रः पुत्रनमन्त्रयामास मधुच्छन्दाः
शृणोतन ऋषभो रेणुरष्टकः। ये के च भ्रातरः
स्थ नास्मै ज्यैष्ठ्याय कल्पध्वमिति॥ इति।

तस्य ह विश्वामित्रस्यैकशतं पुत्रा आसुः पञ्चाश-
देव ज्यायांसो मधुच्छन्दसः पञ्चाशत्कनीयांसः इति।

तद्ये ज्यायांसो न ते कुशलं मेनिरे ताननु व्याज-
हारान्तन्वः प्रजा भक्षीष्टेति त एतेऽन्ध्रा पुण्ड्राः
शबराः पुलिन्दा मूतिबा इत्युदन्त्या बहवो वैश्वा-
मित्र दस्यूनां भूयिष्ठाः इति।

14.1.1 इदानींमूलापाठम्अवगच्छाम

तमृत्विज ऊचुस्त्वमेव नोऽस्याह्नः संस्थामधिगच्छे-
त्यथ हैतं शुनःशेपोऽञ्जःसवं ददर्श तमेताभिश्चतसृ-
भिरभिसुषाव यच्चिद्धि त्वं गृहे गृह इत्यथैनं द्रोण-
कलशमभ्यवनिनायोच्छिष्टं चम्वोर्भरेत्येतयर्चाऽथ
हास्मिन्नन्वारब्धे पूर्वाभिश्चतसृभिः स स्वाहाकारा-
भिर्जुहवांचकाराथैनमवभृथमभ्यवनिनाय त्वं नो
अग्ने वरुणस्य विद्वानित्येताभ्यामथैनमत ऊर्ध्वम-
ग्निमाहवनीयमुपस्थापयांचकार शुनश्चिच्छेपं निदितं
सहस्रादिति इति।

शुन:शेपोपाख्यान-3

टिप्पणी

व्याख्या- देवतानुग्रहयुक्तं तं शुन:शेपं विश्वामित्रदय: सर्व ऋत्विज एवमूचु:। हे शुन:शेप त्वमेव नोऽस्मारकमस्याह्नोऽभिषचनीयाख्यसंस्थां समप्तिमधिगच्छ प्राप्नुहि। अनुष्ठापत्येर्थ:। तैरेवमुक्ते सत्यनन्तरं शुन:शेप एवमभिषेचनीयाख्यां सोमयागमञ्ज:सवं ददर्श। अञ्जसर्जुमार्गेन सव: सोमाभिषवो यस्मिन्यागो सोऽञ्जसवस्तादृशं प्रयोगप्रकारं निश्चितवान्। निश्चित्य च तं सोमं यच्चिद्धीत्यादिभिश्चतसृभिऋग्भिरभिषुतं कृतवान्। अथैनमभिषुतं सोममेतयोच्छिष्टं चम्वोरित्यृचा द्रोणकलशममिक्ष्यावनिनाय द्रोणकलश प्रक्षिप्तवान्। अथानन्तरमस्मिन्हरिशचन्द्रोणाण्वारब्धे शुन:शेलदेहमुपस्पृष्टवति सत्युक्ताभ्य ऋग्भ्य: पूर्वाभिर्यत्र ग्रावेत्यादिभिश्चतसृभिऋग्भि: स्वाहाकारसहिताभि: सोमं जुहुवांचकार। यत्र ग्रावेत्यादिकं सूक्तं नर्वचं तत्र यच्चिद्धीति पञ्चमी तामारभ्य चतसृग्भिऋग्भिरभिषव:। उच्छिष्टमित्यादिका नवमी तया द्रोणकलशे प्रक्षेप:। यत्र ग्रावेत्यादिभिश्चतसृग्भिर्होम इत्येवं कृत्स्नस्य सूक्तस्य विनियोग:। अथ: होमानन्तरमेव कर्तव्यमवभृथमभिलक्ष्यावनिनाय सर्वमवभृथसाधनं तद्देश नीत्वा त्वं नो अग्न इत्यादिकाभ्यामृग्भ्यामवभृथयागं कृतवान्। अथ तथा कृत्वा तत ऊर्ध्वमेनमाहवनीयमग्नि शुनश्चिदित्यनेनोपस्थापयांचकार हरिश्चन्द्रमुपस्थाने प्रेरयामास। सोऽयमञ्ज:सव:। इष्टिपशुसांकर्यम् अन्तरेणाञ्जसर्जमार्गेणानुष्ठितत्वात्।

विश्वमित्र और अजीगर्त का संवाद प्रस्तुत है -

सरलार्थ- (उसके बाद) ऋत्विज ने शुन:शेप को कहा -हमारे इस अनुष्ठान की तुम ही समाप्ति करो। (ऐसा सुनकर) शुन:शेप ने सरल उपाय से सोमाभिषवपूर्वकयागानुष्ठान की व्यवस्था की। स 'यच्चद्धि त्वं गृहे गृहे' इत्यादि ऋचाओं से सोम का अभिषव किया। उसके बाद 'उच्छिष्टं चम्भोर्भव' इत्यादि ऋचाओं से सोम को द्रोण कलश में डाला। उसके बाद अनुष्ठान के आरम्भ से समाप्ति तक स्वाहाकार समेत पूर्व में कही गई 'यत्र गावा' इत्यादि चार ऋचाओ से होम किया। फिर 'त्वा नो अग्ने वरुणस्य विद्वान' इत्यादि दो ऋचाओं से अवभृथयाग का अनुष्ठान किया और फिर उसके बाद 'शुनश्चिच्छेपं निदितं सहस्रम' इत्यादि ऋचाओं से हरिश्चन्द्र को बुलाने के लिए अग्नि में उपस्थान किया।

व्याकरण-

- ऊचु: - वच्-धातु से लिट्-लकार का प्रथम पुरुष बहुवचन का रूप।
- आह- ब्रू-धातु से लट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- ददर्श- दृश्-धातु से लिट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- उपस्थापयाञ्चकार - उप उपसर्गपूर्वक णिजन्त स्था-धातु से लिट्-लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन का रूप।

अथ ह शुन:शेपो विश्वमित्रस्याङ्कमाससाद स
होवाचाजीगर्त: सौयवसिर्ऋषे पुनर्मे पुत्रं देहीति
नेति होवाच विश्वामित्रे देवा वा इमं मह्यमरास-
तेति स ह देवरातो वैश्वामित्र आस तस्यैवे कापि-
लेयबाभ्रवा:इति।

टिप्पणी

शुन:शेपोपाख्यान-3

व्याख्या- अथ अभिषेचनीय कार्य के समापन के बाद हरिश्चन्द्र सहित सभी प्रसन्नचित ऋत्विजों में वो शुन:शेप किसका पुत्र है? ऐसा विचारने पर महर्षियों के वचन सुनकर शुन:शेप: स्वेच्छा से विश्वामित्र को पिता स्वीकार कर उनकी गोद में बैठ गया। पुत्र सर्वत्र और सदा पिता की गोद ही बैठता है। फिर सूयवस पुत्र अजीर्गत द्वारा विश्वामित्र से पुत्र मागने पर उसने मना करके कहा। प्रजापति आदि देवों ने इस शुन:शेप को मुझे दिया इसलिए तुझे नहीं दे सकता। और फिर वो शुन:शेप देवों द्वारा दिए जाने के कारण देवरात नाम से विश्वामित्र का पुत्र कहलाया। उस देवरात के कपिल गोत्र में उत्पन्न और वभ्रुगोत्रउत्पन्न बन्धु हो गये।

शुन:शेप और अजीर्गत में बीच संवाद प्रस्तुत है -

सरलार्थ-फिर शुन:शेप विश्वामित्र के गोद में बैठ गये। उस सूयवस पुत्र अजीर्गत ने कहा - तू मेरा पुत्र दे। विश्वामित्र ने कहा -कभी नही,देवों ने इसे मुझे दिया। फिर उसके बाद शुन:शेप विश्वामित्र के पुत्र देवरात के नाम से विख्यात हुआ। कपिलगोत्र में उत्पन्न बभ्रुगोत्रीय उसके बान्धव हो गये।

व्याकरण-

- उवाच- वच्-धातु से लिट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- देहि- दा-धातु से लोट्-लकार मध्यम पुरुष एकवचन का रूप।

स होवाचाजीगर्त: सौयवसिस्त्वं वेहि विह्वयावहा
स होवाचाजीगर्त: सौयवसिराङ्गरसो
जन्मनाऽस्याजीगर्ति: श्रुत: कवि:। ऋषे
पैतामहात्तन्तोर्माऽपगा: पुनरेहिमामिति स होवाच
शुन:शेपोऽदर्शुस्त्वा शासहस्तं न यच्छूद्रेष्वलप्सत। गवां
त्रीणि शतानि त्वमवृणीथा मदङ्गिर: इति।

व्याख्या-विशामित्र द्वारा मना करने पर वो अजीर्गत शुन:शेप को फिर कहता है। हे पुत्र तू विश्वामित्र को छोड़कर मेरे पास आ जा। तेरी माता और मैं दोनों विशिष्ट रूप से तेरा आह्वान करते है। ऐसा कहकर चुप रहे उस शुन:शेप के लिए पुन: एक और बात कही। हे शुन:शेप तुम जन्म सही अंङ्गिरा गोत्र उत्पन्न अजीगत के पुत्र होकर विद्वान रूप में सर्वत्र प्रसिद्ध हो। अत: हे महर्षि! शुन:शेप प्रजापति द्वारा दादा-परदादा की परम्परा के रूप में संपादितसंतान से अंङ्गिरस वंश को मत छोड़। इसलिए पुन: मेरे घर में आजा शुन:शेप ने प्रत्युत्तर में देते हुए कहता है कि ''शासो विशसनहेतु: खड्ग:।'' हे अजीर्गत मेरे वध के लिए आप सभी को हाथ में तलवार लिए देखता हुँ। ये जो तुम क्रूर कर्म, जो अत्यंत नीच शूद्रों में भी नहीं देखने को मिलता है और न ही इस संसार में तुम जैसा क्रूर कर्म करने वाला हुआ भी नहीं है। हे अङ्गिरस गोत्र में उत्पन्न अजीर्गत के पुत्र तू मेरे भाग की सौ गायों को चुनकर वरण कर ले। ऐसा उसने बार बार कहा।

पुन: अजीर्गत और शुन:शेप का संवाद होता है -

शुन:शेपोपाख्यान-3

टिप्पणी

सरलार्थ- सूयवस के पुत्रअजीगर्त ने शुन:शेप को कहा - (हे पुत्र) तू ही (मेरे समीप) आ जा हम दोनों तेरे पिता तुझे बुलाते है। सूयवस पुत्र अजीगर्त ने (पुन: शुन:शेप को) कहा - (हे पुत्र) तू तेरे जन्म से ही अङ्गिरस अजीगर्त का पुत्र है और एक विद्वान के रूप में प्रसिद्ध है। अत: हे ऋषि! शुन:शेप, तू तेरी पितामह वंश परम्परा से दूर मत जा। पुन: तु मेरे समीप आ जा। (ये सुनकर) शुन:शेप ने कहा - (मारने के लिए) तलवार धारी तुम लोगो को देखा है, ऐसी क्रूरता तो राक्षसों में भी नहीं दिखाई देती है। हे अङ्गिरस वंश में उत्पन्न (अजीगर्त) मेरी जगह तू तीन सौ 300 गायें ले ले।

व्याकरण-

- उवाच- वच्-धातु लिट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- श्रुत: -श्रु-धातु क्त प्रत्ययान्त रूप।

स होवाचाजीगर्त: सौयवसिस्तुद्वै मा तात तपति
पापं कर्म मया कृतम्। तदहं निह्नुवे तुभ्यं
प्रतियन्तु शता गवामिति स होवाच शुन:शेपो य:
सकृत्पापकं कुर्यात्कुर्यादेनत्ततोऽपरम्। नापागा:
शौद्रान्न्यायादसंधेयं त्वया कृतमिति इति।

व्याख्या-शुन:शेप को चाहने वाला अजीर्गत अब अपने पश्चाताप को दिखाने के लिए कुछ कहता है। हे तात पिता के समान पालनीय शुन:शेप मैंने जो पाप किया उससे मेरे मन को उद्वेलित कर दिया है। मैं उस पाप से निवृत होना चाहता हूँ। वो 300 गायें जो पहले मेरे द्वारा अपनाई गई थी वो प्रत्येक गाय तेरे लिए देता हूँ। उसके बाद उस शुन:शेप ने अपनी गाथा से प्रत्युत्तर देता है।जो व्यक्ति धर्मशास्त्र के भय से रहित होकर पाप किया है वो पुरुष उन पापों को प्रवृत्ति के कारण पुन: कर सकता है। तुने जो शुद्र से भी नीच जाति से सम्बंधित क्रुर आचरण किया है उससे मुक्त नहीं हो पायेगा। शून:शेप ने कहा संधान रहित पाप तेरे द्वारा किया गया है।

अब विश्वामित्र के कृत्य को दर्शाते है -

सरलार्थ:- सूयवस पुत्र अजीगर्त ने कहा - वत्स, मैने जो पापकर्म किया है उससे मैं सन्तप्त हुँ। उस पापकर्म को मैं त्यागता हूँ। 30 गायें तुझको देता हूँ। शुन:शेप ने (तब) कहा - जिसने एकवार पापकर्म को किया है वह उस पाप को पुन: कर सकता है। तूने शूद्र तुल्य जो पापाचरण किया है उससे तू मुक्त नहीं होगा। तुमने जो किया है उसके बाद कभी समझौता नहीं हो सकता है।

व्याकरण-

- उवाच- वच्-धातु से लिट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।

- कृतम्- कृ धातु से क्त प्रत्ययान्त रूप।
- कुर्यात् - कृ-धातु से विधिलिङ्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।

असंधेयमिति ह विश्वामित्र उपपपाद स होवाच
विश्वामित्रो भीम एव सौयवसिः शासेन विशिशा-
सिषुः अस्थान्मैतस्य पुत्रे भूर्ममैवोपेहि पुत्रतामिति,
इति।

व्याख्या-"असंधेयप्रतिसमाधेयं पापमितिद्य" शुन:शेप द्वारा जो कहा गया है वो विश्वामित्र युक्ति द्वारा कहते है।उसकी बात को पुष्ट करने के लिए ही विश्वमित्र ने इस गाथा को कहा। सूयवस का पुत्र अजीर्गत भीम या भयंकर हस्त गत खडग लिए हुए वह अपने पुत्र को मारने वाला लग रहा था। अत: हे शुन:शेप इस पापी का पुत्र मत होना किन्तु मेरे पुत्रत्व को प्राप्त कर।

शुन:शेप और विश्वामित्र के मध्य सम्वाद होता है -

सरलार्थः- विश्वामित्र ने भी कहा, (उस कर्म के बाद) सन्धि नही हो सकती है। उसने (विश्वामित्र ने) उससे कहा तलवार को हाथ में लिए, पुत्र को मारने की इच्छा से, सूयवस का पुत्र अति भयङ्कर लग रहा था। (शुन:शेप) तू उसका पुत्र मत हो, तू मेरा ही पुत्र रह।

व्याकरण-

- उवाच- वच्-धातु से लिट्-लकार प्रथमपुरुष एकवचन का रूप।

स होवाच शुन:शेपः स वै यथा नो ज्ञपयाऽऽ
राजपुत्रे तथा वद। यथैवाऽऽङिगरसः सन्नुपेयां
तव पुत्रतामिति स होवाच विश्वामित्रे ज्येष्ठो मे
त्वं पुत्रणां स्यास्तव श्रेष्ठा प्रजा स्यात्। उपेया-
दैवं मे दायं तेन वै त्वोपमन्त्रय इति।

व्याख्या-विश्वमित्र द्वारा संबोधित शुन:शेप पुन: गाथा से विश्वमित्र को कहता है। ये विश्वमित्र जो जन्म से क्षत्रिय होते हुए भी अपने तपो महिमा से ब्रह्मत्व को प्राप्त हुआ। ऐसा कहते हुए उसे हे! राजपुत्र इस प्रकार से संबोधित किया। वो जिस प्रकार राज जातीय होते हुए जिस प्रकार से हम सब के सामने ब्राह्मण के रूप में जाने जाते है। उसी प्रकार मैं कैसे होऊ, इस विषय में भी आप कुछ कहो। उसने कहा कैसे बताऊ? मैं अब कैसे अंङिगरस गोत्र का परित्याग करके तेरे पुत्रत्व को स्वीकार करू जिस प्रकार तुमने प्राप्त किया है, आप ही कहो। इस वाक्य का अभिप्राय: पूर्व में संक्षिप्त दर्शित है।

व्याकरण-

- उवाच- वच्-धातु से लिट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।

शुन:शेपोपाख्यान-3

टिप्पणी

- वद- वद्-धातु से लोट्-लकार मध्यम पुरुष एकवचन का रूप।

'पुराऽऽत्मानं नृपं विप्र (प्रं) तपसा कृतवानसि।
एवमङ्गिरसं मा त्वं वैश्वामित्रमृषे कुरु' इति।

उसके बाद विश्वामित्र ने प्रत्युत्तर में कहा। हे शुन:शेप तू सभी पुत्रों में ज्येष्ठ है ज्येष्ठ हो। तेरी पुत्रदि रूप प्रजा भी और श्रेष्ठ होवे। मुझ विश्वामित्र को देवों ने प्रसन्न होकर देने योग्य पुत्र लाभ दिया तू उसी स्वीकार कर। उसी प्रकार में तुझे पुत्र के समान मानता हूँ।

पुन: शुन:शेप और विश्वामित्र के मध्य वृत्तांत दर्शाते है -

सरलार्थ:- तब शुन:शेप ने कहा, हे राजपुत्र, आप जैसे (राजवंशीय होते हुए भी) मेरे पास (ब्राह्मणरूप में) है उसी प्रकार मैं भी अङ्गिरस: होते हुए भी कैसे आपके पुत्रत्व को प्राप्त कर पाऊंगा, आप ही बताओ। तब विश्वामित्र ने कहा - (हे शुन:शेप) मेरे सभी पुत्रों में तुम ही ज्येष्ठ होओ, तेरे पुत्र भी श्रेष्ठत्व को प्राप्त करे। देवों ने जो मुझे पुत्र भार समर्पित किया है वो तू लेवे। इसीलिए मैं तुझे पुत्र रूप में स्वीकार करता हूँ।

व्याकरण-

- कृतवान्- कृ-धातु से वतु-प्रत्ययान्त रूप।
- कुरु- कृ-धातु से लोट्-लकार मध्यम पुरुष एकवचन का रुप।

स होवाच शुन:शेप: संज्ञानानेषु वै ब्रूयात् सौहार्द्याय
मे श्रियै। यथाऽहं भरतऋषभोपेयां तव पुत्रताम-
त्यथ ह विश्वामित्र: पुत्रनमन्त्रयामास मधुच्छन्दा:
शृणोतन ऋषभो रेणुरष्टक:। ये के च भ्रातर:
स्थ नास्मै ज्यैष्ठ्याय कल्पध्वमिति इति।

व्याख्या-विश्वामित्र द्वारा प्रलोभित शुन:शेप अपने कार्य की दृढ़ता के लिए कहते है। आपके पुत्रों में मेरे विषय में एकमत जानने के लिए सभी को बुलाओ। जो ज्येष्ठ भातृत्व का व्यवहार करे। और फिर मैं भाइयों के अतिस्नेह से सौहार्द्र और धनलाभ को प्राप्त कर सकूं। हे भरतवंश श्रेष्ठ विश्वामित्र आपके पुत्रत्व को प्राप्त करूँ जिसके लिए उन पुत्रों के अग्रज रूप में स्वीकार किया जाऊ। फिर विश्वामित्र ने सभी पुत्रों को बुलाकर कहा। जो मधुच्छन्दा, ऋषभ, रेणु, अष्टक नाम के है। हे पुत्रों मेरी आज्ञा सुनों। तुम सभी भ्राता इस शुन:शेप को ज्यैष्ठ मानो और अपने में ज्येष्ठत्व का अभिमान मत करो। जिससे कि तुम सभी में ये ज्येष्ठ होकर रह सके

अब विश्वामित्र के पुत्रों का वृत्तान्त कहते है -

सरलार्थ-उस शुन:शेप ने कहा - हे भरतर्षभ, आपके पुत्रों को एक साथ में बुलाओ , जिससे कि मैं आपके पुत्रत्व को प्राप्त करू। जिससे मेरा सौहार्द लाभ और श्रीलाभ होवे। इसके बाद विश्वामित्र ने अपने पुत्रों को बुलाकर कहा- हे मधुच्छन्द, ऋषभ, रेणो, अष्टक, सुनों। तुम्हारे ये जो भ्राता है उनमें शुन:शेप ज्येष्ठ रूप में माने जाए।

टिप्पणी

व्याकरण-

- उवाच- वच्-धातु से लिट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- ब्रूयात्- ब्रू- धातु से विधिलङ्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- कल्पध्वम् - कल्प-धातु से लोट्-लकार मध्यम पुरुष बहुवचन का रूप।

तस्य ह विश्वामित्रस्यैकशतं पुत्र आसुः पञ्चाश-
देव ज्यायांसो मधुच्छन्दसः पञ्चाशत्कनीयांसः इति।

व्याख्या- मधुच्छन्द नामक कोई पुत्र मध्यम है, उससे ज्योष्ठ और कणिष्ठ, जो 50-50 है इस प्रकार उसके सौ पुत्र है।

उनमें ज्येष्ठों का वृत्तान्त कहा है -

सरलार्थः-उस विश्वामित्र के सौ पुत्र थे, (उनमें) 50 मधुच्छन्द से ज्येष्ठ और 50 मधुच्छन्द से कनिष्ठ थे।

व्याकरणम्-

- ज्यायांसः - अयम् अनयोः अतिशयेन वृद्धः प्रशस्यः वा। ज्यादेशः। ज्या+ईयसुन्। ईयसुन् प्रत्ययान्तं पुंलींग प्रथमा बहुवचन का रूप।
- कनीयांसः - अयम् अनयोः अतिशयेन युवा अल्पो वा। कनादेशः। कन्+ईयसुन्। ईयसुन् प्रत्ययान्त पुल्लिंग प्रथमा बहुवचन का रूप।

तद्ये ज्यायांसो न ते कुशलं मेनिरे तानन्‌ु व्याज-
हारान्तन्वः प्रजा भक्षीष्टेति त एतेऽन्ध्रा पुण्ड्राः
शबराः पुलिन्दा मूतिबा इत्युदन्त्या बहवो वैश्वा-
मित्र-दस्यूनां भूयिष्ठाः इति।

व्याख्या- उन सौ पुत्रें में जो 50 मधुच्छन्द से ज्येष्ठ है वे शुन:शेप को विश्वामित्र के पुत्रत्व रूप में कुशलरूप से नही मानते है अर्थात भली प्रकार से स्वीकार नहीं करते है। उन 50 ज्येष्ठों को लक्ष्य करके विश्वमित्र ने व्याहरण शापरूप वाक्य कहा। हे ज्येष्ठ पुत्रों तुमने मेरी आज्ञा का उलंघन किया अत: प्रजा पुत्रादि चण्डालादि रूप नीच जाति-विशेष को प्राप्त हो जावे। वे सात इसप्रकार है अन्ध्रत्वादि पांच प्रकार की नीचजाति विशेष होते है। इति शब्द से और भी नीच जाति विशेष सभी का ग्रहण होता है। उद्गातोऽन्त उदोन्तोऽन्यन्तनीचजातिस्तत्र भवा ऊदन्त्याः। वे बहुत है अनेक विध है वैश्वामित्र अर्थात विश्वमित्र संतति सभी दस्युओं की जातियों में प्रधान है।

सरलार्थ-और जो उनमें ज्येष्ठ है उन्होनें इससे पूर्णरूप से नहीं स्वीकार किया। उनके लिए विश्वामित्र ने अभिशाप वाक्य कहा –तुम्हारे पुत्र शूद्रत्व को प्राप्त करे। उनमें अन्ध्र, पुण्ड्र,

टिप्पणी

शवर, पुलिन्द, मूतिव इत्यादि ने शूद्रत्व को प्राप्त किया। विश्वामित्र के वंश ने उत्पन्न हुए ये सभी विविध जातियों के दानवों में प्रधान है।

व्याकरण-

- भूयिष्ठा: –अतिशय रूप से। बहु+इष्ठन्। भ्वादेशे युक् च। प्रथमा बहुवचन का रूप है।

स होवाच मधुच्छन्दा: पञ्चाशता सार्धं यन्न:
पिता संजानीते तस्मिंस्तिष्ठामहे वयम्। पुरस्त्वा
सर्वे कुर्महे त्वामन्वञ्चो वयं स्मसीति इति।

व्याख्या-कनिष्ठपुत्रणां पञ्चशाता सह मधुच्छन्दोनामक: स मध्यम: पुत्र: शुन:शेपं प्रत्येवमुवाच। हे शुन:शेप नोऽस्माकं पिता वि श्वामित्रे यत्कार्यं त्वदीयज्येष्ठपुत्रत्वरूपं संजानीते सम्यग्जानात्यङ्गीकरोति तस्मिन् कार्ये वयं तिष्ठामहे तत्कार्यमङ्गीकुर्म:। सर्वे वयं त्वा शुन:शेपनामानं त्वां पुरस्कुर्महे पुरस्कृत्य ज्येष्ठं कृत्वा वर्तामहे। त्वामन्वञ्च: शुन:शेपमनुगच्छत: स्मसि भवाम इत्युक्तवान्।

ज्येष्ठो का वृत्तान्त कहकर मधुच्छन्द से कनिष्ठों का वृत्तान्त कहा गया-

सरलार्थ:-उस मधुच्छन्द ने पचास के साथ कहा -हमारे पिता ने जो आदेश दिया है हम उसका पालन करेंगे। हम आप ही को अग्रज रूप तथा ज्येष्ठ भ्रातृ रूप में मानकर आचरण करेंगे।

व्याकरण-

- संजानीते- सम् उपसर्ग पूर्वक ज्ञा- धातु से लट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- तिष्ठामहे- स्था- धातु से उत्तम पुरुष बहुवचन में वैदिक रूप।
- कुर्महे- आत्मनेपद पक्ष में कृ- धातु से लट्-लकार उत्तम पुरुष बहुवचन का रूप।

अथ ह विश्वामित्र: प्रतीत: पुत्रंस्तुष्टाव इति।

व्याख्या- अब मधुच्छन्द सहित 50 कनिष्ठ पुत्र को शुन:शेप के ज्येष्ठ पुत्रत्व अङ्गीकरण के बाद उस विश्वामित्र ने इनके दृष्टिकोण को या इनकी बात को अपने अनुकूल है, ऐसा मानकर प्रीतिपूर्वक पुत्रें को गाथाओं द्वारा कहा।

यहाँ विश्वामित्र का वृत्तान्तबताया गया है -

सरलार्थ:- इसके बाद में विश्वामित्र (पुत्र वाक्य में) विश्वास करके उनको सांत्वना प्रदान करने के लिए ऐसे बोले -

व्याकरण-

- स्तुष्टाव- ष्टुञ्-धातु से लिट्-लकार उत्तम पुरुष द्विवचन का रूप।

ते वै पुत्रः पशुमन्तो वीरवन्तो भविष्यथ।
ये मानं मेऽनुगृह्णन्तो वीरवन्तमकर्त मा इति।

व्याख्या-हे मधुच्छन्द प्रमुख कनिष्ठ पुत्र तुमने मुझे मेरे मत को अनुगृहित और अनुकूलता से स्वीकार करके इस विश्वामित्र को वीरवान अर्थात स्वधर्म(शूरपुत्र) से युक्त किया वे ही इसी प्रकार बहुविध पुत्र युक्त और बहुविध अनुकूल पुत्र युक्त होंगे।

प्रथम गाथा कहते है -

सरलार्थ-मेरे जिन पुत्रों मेरे वाक्य को अङ्गीकार करके मुझे वीर पुत्रवान किया है। वे ही अनुकूल पुत्र युक्त और बहुविध पुत्र युक्त होंगे।

व्याकरण-

- वीरवन्तः - वीर प्रातिपदिक से मतुब् प्रत्यय होने पर प्रथमा बहुवचन का रूप।
- पशुमन्तः - वीर प्रातिपदिक से मतुब् प्रत्यय होने पर प्रथमा बहुवचन का रूप।
- भविष्यथ - भू (सत्तायाम्) धातु से लट्-लकार मध्यम पुरुष बहुवचन का रूप।

पुर एत्रा वीरवन्तो देवरातेन गाथिनाः।
सर्वे राध्याः स्थ पुत्र एष वः सद्विवाचनम्। इति।

व्याख्या- गाथिन शब्द से विश्वामित्र के पिता को कहा गया है। हे गाथि पौत्र तुम सबके पूर्व में होने वाला मुख्य देवरात के साथ तुम सब भी वीरवान श्रेष्ठ पुत्रयुक्त हो। सभी पुरुषो द्वारा तुम आराध्य हों। हे पुत्रों! मधुच्छन्द आदि अनेक को ये देवरात सुवाचन से सन्मार्ग का विशेष अध्यापन कराएगा।

दुसरी गाथा कहते है -

सरलार्थ- हे गाथिवंशीय! तुम्हारे से पूर्व विद्यमान देवरात के साथ तुम भी वीरपुत्र विशिष्ट होवों, आप सभी पूज्य हों। हे पुत्रों! ये देवरात ही तुमको सदुपदेश देगा।

व्याकरण-

- वीरवन्तः - वीर प्रातिपदिक से मतुब् प्रत्यय होने पर प्रथमा बहुवचन का रूप।
- स्थ - अस्-धातु से लट्-लकार मध्यम पुरुष बहुवचन का रूप।

एष व: कुशिका वीरो देवरातस्तमन्वित। युष्मांश्च
दायं म उपेता विद्यां यामु च विद्मसि। इति।

व्याख्या- हे कुशिका- कुशिकन नाम के मेरे पितामह के सम्बन्धित मधुच्छन्द आदि सुनो -ये देवरात तुम्हारा ज्येष्ठ भ्राता है। उस देवरात का तुम सभी अनुगमन करो। मेरा देने योग्य धन तुमको और देवरात को प्राप्त होवे। और जो कोई भी वेदशास्त्रादि रूप विद्या में जानता हूँ वो भी तुम सभी को प्राप्त होवे।

तृतीय गाथा कहते है -

सरलार्थ- हे कुशक गोत्र में उत्पन्न पुत्रों, यह वीर देवरात है, तुम सब उसका अनुगमन करो। मेरा जो धन और शास्त्रदि ज्ञान है वो तुम सभी प्राप्त करो।

व्याकरण-

- विद्मसि- विद्-धातु से लट्-लकार उत्तमपुरुष बहुवचन का रूप। वैदिक में मसि प्रयोग होता है।

ते सम्यञ्चो वैश्वामित्र: सर्वे साकं सरातय:।
देवराताय तस्थिरे धृत्यै श्रैष्ठ्याय गाथिना:इति।

व्याख्या- हे विश्वामित्र-विश्वामित्र के अर्थात मेरे पुत्र, ये गाथिना -गाथिपौत्र तुम सभी सम्यक बुद्धि से युक्त, देवरात के साथ धनसंपत्ति से युक्त हो, देवरातय-मेरे श्रेष्ठपुत्र देवरात को धारण करने से, युष्मत्पोषणं श्रैष्ठ्याय-तुम्हारे मध्य में और श्रेष्ठत्व के रूप में स्वीकृत किया।

चौथी गाथा कहते है -

सरलार्थ:- हे विश्वामित्र पुत्रों, हे गाथि पौत्रें, तूम सभी भली-भांति बुद्धिसम्पन्न हो, तुम सभी देवरात के साथ धन सम्पदा के भोक्ता होवें, क्योंकि तुमने देवरात को श्रेष्ठ रूप में स्वीकृत किया।

अधीयत देवरातो रिक्थयोरुभयोर्ऋषि:।
जह्नुनां चाऽऽधिपत्ये दैवे वेदे च गाथिनाम्। इति।

व्याख्या-इक् स्मरण इति धातु:। अधीयत स्मृतिकारैर्महर्षीभि: स्मर्यते। कथमिति तदुच्यते। अयं देवरातो द्वामुष्यायणत्वादुभयोरजीर्गताविश्वमित्र्यो: संवन्धिनि ये रिकथे धने तर्योऋषिद्रष्ट्रा। तदुभयमर्हतीत्यर्थ:। अजीगर्तस्य कूटस्य ऋषिर्जह्संज्ञकस्तस्य वंशे जाता: सर्वे जहरुवस्तेषां चाऽऽधिपत्ये स्वामित्ये देवरातो योग्य:। तथा दैवे देवसंवन्धिनी यागादिकर्माणि वेदे च मन्त्ररूपे समर्थ:। गाथिनामस्मत्पितृसंशोत्पन्नानां च सर्वेषामधिपत्ये योग्य:।

पांचवी गाथा को कहा-

सरलार्थ- देवरात और ऋषि दोनों सम्पदा के अधिकारी होकर जह्णु वंशीयों के आधिपत्य की शक्ति से, गाथि वंशीयों के दैवकर्म से, वेदज्ञान के योग्य इत्यादि द्वारा ख्याति प्राप्त करेंगे।

टिप्पणी

व्याकरण-

- अधीयते - अधि उपसर्ग से अध्ययनार्थक इङ्-धातु से लट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।

तदेतत्परऋक्शतगाथां शौनःशेपमाख्यानम्।इति।

व्याख्या- कस्य नूनं निधारयेत्यान्ताः सप्ताधिकनवतिसंख्यका ऋचस्त्वं नः स त्वमित्यादिकास्तिस्र ऋच एवमृचां शतम्। परःशब्दोऽधिकवाची। पूर्वोक्तदृक्शतात्-परोऽधिका एकत्रिंशत्संख्यका यं न्विममित्याद्या गाथा यस्मन्नाख्याने तदेतत्परऋक्शतगाथम्। शुनःशेपेन दृष्टाः सप्ताधिकनवतिसंख्यायुक्ता ऋचो याः सन्त्यन्येन दृष्टास्तिस्र ऋचो याः सन्ति ब्राह्मणे प्रोक्ता एकत्रिशदगाथाविशेषा ये सन्ति तैः सर्वैरुपेतं हरिश्चन्द्रो ह वैधस इत्यादिकं सर्वं शुनःशेपविषयमाख्यानम्।

उनके आख्यान में राजसूय यज्ञ का विनियोग दर्शाया गया है -

सरलार्थ- सौ ऋचाओं से और कुछ गाथाओ से युक्त ये शुनःशेप का उपाख्यान है।

व्याकरण-

- आख्यानम्- आङ्- उपसर्ग पूर्वक अदादिगणीय ख्या धातु से ल्युट का रूप है।

तद्धोता राज्ञेऽभिषक्ताऽचष्टे। इति।

व्याख्या-राजसूय यज्ञ में अभिर्षेचनीय कर्म में जब राजा अभिषिक्त होता है तब उस राजा के लिए यह आख्यान होता कहे।

अब यहां होता के कर्तव्य का वर्णन किया जा रहा है -

सरलार्थ-अभिषेक हुए राजा को होता ये उपाख्यान कहें।

व्याकरण-

- आचष्टे- आङ्- उपसर्ग पूर्वक चक्षिङ्- धातु से लट्-लकार प्रथमपुरुष एकवचन का रूप।

हिरण्यकशिपावासीन आचष्टे हिरण्यकशिपावा-
सीनः प्रतिगृणाति यशो वै हिरण्यं यशसैवैनं
तत्समर्धयति। इति।

व्याख्या-होता जब-जब उपाख्यान कहता है तब, हिरण्यकशिपौ- सुवर्णनिर्मीत धागों से र्निष्पादित कशिप(आसन पर) वो होता बैठता है।और उस आख्यान में बीच बीच में अध्वर्यु हिरण्य आसन पर विराजित होकर संबोधित करता है। हिरण्य यश का हेतु है अतः उसको यश भी कहते है। तथा इसीलिए राजा को यशस्वी और समृद्ध करता है।

शुन:शेपोपाख्यान-3

टिप्पणी

अधवर्यु द्वारा बोले गए संबोधनों की विशेषता दिखाते है -

सरलार्थ- होता स्वर्ण निर्मित आसन पर बैठते हुए ये आख्यान कहता है। अध्वर्यु भी स्वर्ण निर्मित आसन पर बैठते हुए पुन: उच्चारित करते है। हिरण्य अर्थात सोना यश का हेतु है और यश से ही राजा समृद्ध होता है।

व्याकरण-

- आचष्टे- आङ्-उपसर्ग पूर्वक चक्षिङ्- धातु से लट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- प्रतिगृणाति- प्रति उपसर्ग से क्र्यादिगणीय गृ धातु से लट में तिप होकर रूप बना।
- समर्धयति- सम उपसर्ग पूर्वक णिजन्त ऋधु (वृद्धौ) अर्थक धातु से लट्-लकार प्रथमपुरुष एकवचन का रूप।

ओमित्यृच: प्रतिगर एवं तथेनि गाथाया ओमिति
वै दैवं तथेति मानुषं दैवेन चैवैनं तन्मानुषेण च
पापादेनस: प्रमुञ्चति। इति।

व्याख्या-होत्रा प्रयुक्ताया एकैकस्या ऋचोऽन्तेऽधवर्योरोमित्येतादृश: प्रतिगरो भवति। ओमित्येतच्छन्दोरूपं दैवं देवैवङ्गीकारार्थे प्रयुज्यते। तत्तथेत्यन्तं (तथेति) मानुषं मनुष्या अङ्गीकारे तथेतिशब्दं प्रयुञ्जते। तत्तेन प्रतिगरेण दैवेम मानुषेण चाधर्वयुरेनं राजानं पापादैहिकादकपकीर्तिरूपादेनसो मरकहेतोश्च प्रमुञ्चति प्रमुक्तं करोति।

यज्ञ के विषय में उपाख्यान करके यज्ञीय निरपेक्ष पुरुषार्थ का विधान करते है -

सरलार्थ- होता द्वारा प्रत्येक ऋचा के बाद ओम् और प्रत्येक गाथा के बाद उसका पुन: कथन करे। ओम् शब्द दैव है, तथा शब्द मानव है, दैव और मानव कहने से राजा को पार लौकिक और ऐहिक समस्त पापों से अध्वर्यु मुक्त करवाता है।

व्याकरण-

- प्रमुञ्चति- प्र उपसर्ग पूर्वक मुच् धातु से लट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।

तस्माद्यो राजा विजिती स्यादप्ययजमान आख्या-
पयेतैवैतच्छौन:शेपमाख्यानं न हास्मिन्नल्पं चनैन:
परिशिष्यते। इति।

व्याख्या- जिसके उपाख्यान को पाप प्रशमन का हेतु कहा है उसको यजमान भी, राजा विजिती- विजय प्राप्त राजा हो, यदि वो भी इस शून:शेपख्यान को कहे।उस राजा को कोई ब्राह्मण उपाख्यान कहे। तथा सति - इससे उस राज्य में थोड़ा भी पाप नही परिशिष्ट रहता है अर्थात सम्पूर्ण पापों का नाश हो जाता है।

टिप्पणी

अख्यान के बाद अब दक्षिणा को बताते है -

सरलार्थ-इसके बाद उस राजा ने विजय प्राप्त की, वो यजमान होकर भी यदि शुनःशेप के आख्यान को बोलता है तो उसके पापों का कण भी अवशिष्ट नहीं रहता है।

व्याकरण-

- स्यात् - अस्-धातु से विधिलिङ-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- परिशिष्यते - परि उपसर्ग पूर्वक शास्(अनुशिष्टौ) अर्थ वाली धातु से लट्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।

सहस्रमाख्यात्रे दद्याच्छतं प्रतिगरित्र एते चैवाऽऽ-
सने श्वेतश्चाश्वतरीरथो होतुः। इति।

व्याख्या-योऽमाख्यात होता तस्मै क्रत्वर्थदक्षिणामन्तरेणोपाख्यान-प्रयुक्तां दक्षिणां गोसहस्ररूपां दद्यात्। प्रतिगरित्रेऽधवर्यवे गोशतं दद्यात्। ये हिरण्यकशिपुरूपे द्वे स्त एते अपि ताभ्यामेव दद्यात्। अश्वतरीभ्यां संकीर्णज्ञातियुक्ताभ्यामधिकशक्तिभ्यां युक्तो रथोऽश्वतरीरथः। स च रजतेनालं -कृतत्वाच्छ्वेतः। सोऽपि तादृशो होतुर्देयः।

पूर्वमयज्ञसंयुक्तं कल्पो विजयिनो राज्ञोऽभिहितः। इदानीं पुत्रकामानामपि (सर्वेषामपि) विधत्ते-

सरलार्थ-जो आख्यान को कहते है उसको 1000 गायें देनी चाहिए और जो संबोधन करे उसे 100 गायें देनी चाहिए। वे दोनों हिरण्य से युक्त होते है अतः उनको सुवर्ण भी देना चाहिए। श्वेत अश्वों से युक्त रथ होता को देना चाहिए।

व्याकरण-

- दद्यात्- दा-धातु से विधिलिङ्-लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप।
- होतुः- होतृ प्रातिपदिक षष्ठ्यन्त का रूप है।

पुत्रकामा हाप्याख्यापयेरल्लँभन्ते ह पुत्राँल्लभन्ते ह
पुत्रान्॥18॥इति।

व्याख्या- ये पुत्र कामना वाले हैं, वे इस प्रसिद्ध उपाख्यान को ब्राह्मण मुख से सुने। वे पुत्र से लाभान्वित होते है। (अभ्यासोऽभ्यायसमाप्त्यर्थः)।

सरलार्थ- पुत्र की कामना वाले लोग भी आख्यान को पढ़ते है। इससे उनको पुत्रलाभ होता है।

टिप्पणी

व्याकरण-

- लभन्ते- लभ्-धातु से लट्-लकार प्रथम पुरुष बहुवचन का रूप।

पाठगत प्रश्न

130. ऋत्विज ने किसको अनुष्ठान समाप्त करने के लिए कहा?

131. शुन:शेप किसकी गोद में बैठा ?

132. उसके बान्धव कौन हो गये ?

133. कितनी गायें उसको दी ?

134. विश्वामित्र के कितने पुत्र थे ?

135. किससे 50 ज्येष्ठ और कनिष्ठ थे ?

136. विश्वामित्र में किसके लिए अभिशाप वाक्य कहे ?

137. विश्वामित्र ने कनिष्ठ पुत्रों के लिए क्या कहा ?

138. गाथिन: शब्द किसकी और संकेत करता है?

139. कौन गाथि वंशीयों के लिए सदुपदेश देगा ?

पाठसार

इस पाठ में शुन:शेप उपाख्यान का पांचवे खण्ड का वर्णन किया गया है। इस खण्ड में जो कहा गया है उसको सार रूप से कहते है। इस खण्ड में शुन:शेप को विश्वामित्र पुत्र के रूप में स्वीकार किया। वस्तुत शुन:शेप अजीगर्त का पुत्र था, उसके अपने पिता की क्रूरता को देखकर विश्वामित्र का पुत्र रूप को स्वीकार किया है। विश्वामित्र में भी उसको पुत्ररूप से स्वीकार किया है। विश्वामित्र के सौ पुत्र था। उनमे पचास पुत्रो ने शुन:शेप को भाई के रूप में स्वीकार नही किया। उससे विश्वामित्र ने उनको अभिशाप दिया। पुन पचास पुत्रो ने उसे भाई के रूप में स्वीकार किया है।

पाठान्त प्रश्न

140. शुन:शेप उपाख्यान के तीसरे पाठ का सार संक्षेप से लिखो।

141. ''तमृत्विज उचुस्त्वमेव.....सहस्रादिति'' मन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या करो।

शुन:शेपोपाख्यान-3

142. ''अथ ह शुन:शेपो..... कापि लेयवाभ्रवा:'' इस मन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या करो।

143. ''स होवाचाजीगर्त:....शतानि त्वमवृणीथा मदङ्गिर'' इस मन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या करो।

144. ''स होवाचाजीगर्त:.... त्वया कृतमिति'' मन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या करो।

145. ''असंधेयमिति ह विश्वामित्र.....पुत्रतामिति'' मन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या करो।

146. ''स होवाच शुन:शेप: .....त्वोपमन्त्रय'' इस मन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या करो।

147. ''स होवाच शुन:शेप:....ज्यैष्ठ्याय कल्पध्वमिति'' इस मन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या करो।

148. ''तस्य ह विश्वामित्रस्यैकशतं...'' इत्यादिमन्त्रों का सरलार्थ और प्रसङ्ग का वर्णन करो।

149. ''स होवाच मधुच्छन्दा:.....वयं स्मसीति'' इस मन्त्र की सरलार्थ और प्रसङ्गका वर्णन करो।

150. ''ते वै पुत्रा: पशुमन्तो ...'' इत्यादिमन्त्र की सरलार्थ और प्रसङ्गका वर्णन करो।

151. ''एष व: कुशिका वीरो...यामु च विद्मसि'' इस मन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या करो।

152. अजीगर्त को अवलम्ब करके एक लघु कथा लिखो।

153. शुन:शेप को अवलम्बन करके एक लघुप्रबन्ध लिखो।

154. विश्वामित्र को आश्रित करके लघुप्रबन्ध लिखो।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

155. ऋत्विज ने शुन:शेप को अनुष्ठान की समाप्ति के लिए कहा।

156. विश्वामित्र के गोद में बैठा।

157. कपिल गोत्र में उत्पन्न वभ्रुगोत्रीय उसके बान्धव हुए।

158. उसको 300 गायें दी।

159. 100 पुत्र थे।

160. मधुच्छन्दस:।

161. जिन्होंने अपने पिता के वाक्य असमीचीन रूप में समझे थे।

162. तुम सभी बहुविध पुत्र युक्त और बहुविध अनुकूल पुत्र युक्त होवों।

163. विश्वामित्र के पिता को कहता है।

164. देवरात ने।

टिप्पणी

14.2 शुन:शेप उपाख्यान का सार

शुन:शेप उपाख्यान अत्यन्त विशाल तीन पाठो में लिखा गया है। प्रसङ्ग से उसको एक जगह एकत्रित करके नीचे दिया गया है वैदिक साहित्य का मण्डन करने वाले ब्राह्मणों में श्रेष्ठ अनेक आख्यान से समृद्ध ऐतरेय ब्राह्मण है। इस ब्राह्मण के तैतीसवें अध्याय में राजसूय यज्ञ के वर्णन अवसर पर शुन:शेप का जो आख्यान उपलब्ध होता है, वह आधुनिक काल में भी प्रसङ्गिक है। इस आख्यान के तीन अंश है। प्रथम भाग में हरिश्चन्द्र नारद संवाद, दूसरे भाग में हरिश्चन्द्र वरुण संवाद, तीसरे भाग में हरिश्चन्द्र पुत्र रोहित अजीगर्त का पुत्र शुन:शेप ऋषि विश्वामित्र संवाद है। सम्पूर्ण आख्यान में तीस गाथा है।

इक्ष्वाकुवंश में हरिश्चन्द्र नाम का राजा था। उसकी सौ पत्नियों के होने पर भी वह सन्तान रहित था। एक बार उसके महल की तरु पर्वत नारद नाम के दो ऋषि आये। राजा अपनी दुर्दशा प्रकट करते हुए ऋषि नारद से कहा - विवेकि मनुष्य आदि प्राणि विवेकहीन पशु पक्षी आदि सम्पूर्ण जीवकुल भी सन्तान की कामना करते है -इसका क्या कारण है। तब नारद दशगाथा के द्वारा इस प्रश्न का सुंदर उत्तर देते है - ''वह एक ही प्रश्न को दश प्रकार से कहते है। नारद कहते है की यदि पिता जीव दशा में पुत्र के मुख का दर्शन करता है, तो वह वैदिक और लौकिक ऋण से मुक्त होता है। और ऋण मुक्त होने पर उसको अमृत की प्राप्ति होती है। वह अपने ऋणसमूह को पुत्र में आदान कर सकता है। पुत्र के जन्म से पितर कुल प्रसन्न होता है, क्योकि सम्पूर्ण पार्थिव सुख से पुत्रलाभ अधिक सुखप्रद है। ये बहुत प्राचीनकाल से ही प्रसिद्ध सभी के द्वारा और अनुभव सिद्ध मत है। उससे वैयाकरण भी अर्द्ध मात्र कम होने पर पुत्र के उत्पन्न होने के समान उत्सव मनाते है - ''अर्धमात्रालाघवेन पुत्रोत्सव इव मन्यन्ते वैयाकरणा:''। पुत्र रहित पिता बहुत सम्पन्न होने पर भी दु:ख विघ्न रहते है। मनु संहिता आदि धर्म शास्त्रों में कहा गया है - पुत् नाम का एक भंयकर घनघोर अन्धकार से आच्छादित नरक है। पुत्र उस नरक से पितर को पार कर सकता है। अत वह पुत्र है। ''पुंनाम नरकात् त्रायते स पुत्र:'' यह पुत्रशब्द की व्युत्पत्ति है। वहाँ पर मल-अजिन-श्मश्रु-तप: -इन चार प्रतीक के द्वारा नारद ने भारतीय चार आश्रम व्यवस्था का निर्देश किया। ये चार आश्रम निष्फल होते है, यदि संसार में सन्तान नही हो तो। पुत्रहीन समाज में निन्दा को प्राप्त होता है, पुत्र के होने पर हर जगह प्रशंसा को प्राप्त होता है। अत: पुत्र लाभ अत्यन्त आवश्यक है। कन्या सन्तान भी प्रशंसा के योग्य है (कृपणं ह दुहिता, 33।1)। केवल पुत्र ही नही कन्या भी पिता के सम्मान को आगे बढ़ाती है। क्योकि व: स्वयं ही परमलोक के अमृत स्वरूप और ज्योति स्वरूप है। पति की आत्मा ही पुत्ररूप से जन्मलाभ प्राप्त होता है। पुत्रहीन के लिए सभी अच्छे लोक के द्वारा बांध रहते है। अविवेकि पशु भी इस संस्कार को जानते है। अत: वे प्रयोजन के होने पर सन्तान लाभ में लिए अपनी बहन आदि के साथ सङ्गम आदि करते है। इए दृष्टान्त से नारद ये बोध कराना चाहते हैं की पुत्र केवल इच्छा विषय नहीं है, अपितु ऋणमुक्त करने में यहाँ और परलोक दोनों में सुख दु:ख से विमुक्त करने का श्रेष्ठ मार्ग है। इसलिए ही पुत्रहीन राजा हरिश्चन्द्र को पुत्रसन्तान की अत्यन्त आवश्यकता थी। अत: नारद पुत्र लाभ के उपायों को भी महाराज हरिश्चन्द्र को बताये। नारद ने कहा -राजा यदि वरुणदेव से प्रार्थना करके सन्तोष करने में समर्थ हो तो आपका अभीष्ट सिद्ध होगा। नारद के उपदेशानुसार से राजा हरिश्चन्द्र ने वरुण से प्रार्थना की।

वर के साथ वरुण ने राजा को एक स्वर्ण मुद्रा भी दी, जो नवजात पुत्र से उसके याग अनुष्ठान को पूर्ण करेगा। पुत्र विरह से पीडित राजा उसके द्वारा सहमत हुए। समय के अनुसार राजा हरिश्चन्द्र ने पुत्र सन्तान को प्राप्त किया। उसका नाम रोहित था। उसके अनुसार राजा हरिश्चन्द्र पुत्र वियोग की इच्छा के भय से अनेक याग देर से करते थे। कभी पुत्र के दश दिन होने दो, कभी पुत्र के दांत उत्पन्न हो जाए, कभी वे दांत गिर जाये, पुन दांत उत्पन्न हो जाए, कभी यह क्षत्रिय की सन्तान है, अत: कुछ धनुर्विद्या आदि की शिक्षा हो ऐसा कहकर प्रत्येक बार वह वरुण का निराकरण करता था। वरुण भी प्रत्येक बार 'यजस्व मानेन' ऐसा कहकर उसकी प्रार्थना को सुनकर दयावश पुन: चले जाते थे। इसी प्रकार सोलह वर्ष बीत गये। एकबार जब कोई उपाय नही शेष रहा तो राजा ने पुत्र को बुलाकर के उसका सम्पूर्णजन्मवृत्तान्त का वर्णन किया। किन्तु तब पुत्र रोहित स्वाधीनचिन्तन आदि करने में समर्थ था। अत: वह वरुण की मुद्रा लेकर के धनुष बाण आदि से सज्जित होकर जंगल में घुमने के लिए निकल गया। राजा मुद्रा से रहित हो गए थे। क्रुद्ध वरुण राजा हरिश्चन्द्र को श्राप दिया की राजा को कठिन उदररोग होगा। यहाँ हमारे द्वारा यह स्मरण करना चाहिए की वेद में वरुणदेव के श्राप की अत्यधिक प्रार्थना की। ये रोग भी उनके पाशों में से एक अकाट्य है। वह जिस किसी को भी रोग ग्रस्त अथवा पाशग्रस्त करने में समर्थ है। वन में परिभ्रमण शील रोहित को पिता की कठिन रोग की बात को राज्य की तरफ से आ रहे आगन्तुक के वेश में स्वयं देवराज इन्द्र ने ब्राह्मण वेश में मार्ग को रोककर कहा। वह किसी गाथा के द्वारा रोहित को चरैवेतितत्व को समझाया। वह बोला की जो हमेशा विचरणशील घुमने की प्रकृति उस प्रकार का परिश्रमी मनुष्य धन-धान्य से युक्त होता है। उसके दोनों पैर अनेक तीर्थ के पर्यटन करने से लक्ष्मी से मण्डित होते है। वह फलयुक्तवृक्ष के समान धन से युक्त है। आलस्य कर्महीन मनुष्यों के एक जगह स्थित होने पर पापा बढ़ते है। सोने वालो के भाग्य भी सो जाते है। बैठे हुए निष्काम वाले मनुष्य के भाग्य भी स्थाणु के समान एक ही स्थान पर रहते है, कही पर भी जाने में समर्थ नही है। इस प्रकार के मनुष्यों का आलस्य तामसिक प्रवृति का ही है। चलने वाला और परिश्रमी मनुष्य सत्यगुण को धारण करने वाला है। आलसी मनुष्य के मन अनेक प्रकार के बुरे आचरण करने में चालाक है। जिस पत्थर पर से मनुष्य चलते है, उस पर घास उत्पन्न नही होता है। इसी प्रकार कर्मरत मनुष्य कभी भी बुरे आचरण में प्रवृत नहीं होगा। 'चरन् वै मधु विन्दति' यह ब्राह्मण का कथन है। वह दृष्टान्त के द्वारा दिखाता है की सूर्य का श्रेष्ठ होना (सूर्यस्य पश्य श्रेमाणम्) उसका आलस्य से रहित परिक्रम करना ही उसका श्रेष्ठ होने को प्रकट करता है। इस प्रकार इन्द्र के उपदेश को सुनकर छ: वर्ष तक वही पर रोहित स्थित रहा।

एक बार वन में वह किसी दरिद्र भूख से पीडित ब्राह्मण परिवार को प्राप्त हुआ। परिवार के मुखिया का नाम अजीगर्त है। उसके तीन पुत्र है शुन:पुच्छ, शुन:शेप,और शुनोलाङ्गूल। लोभी दरिद्र ब्राह्मण रोहित से सौ गायो को स्वीकार करके मध्यमपुत्र शुन:शेप को रोहित के लिए देता है। वरुणदेव ने भी क्षत्रिय सन्तान के स्थान पर ब्राह्मण सन्तान से विहित याग का समर्थन किया। उसके अनुसार ही सवनीय से पुरुष पशु के द्वारा शुन:शेप ने याग प्रारम्भ किया। पुरुषमेध याग में पुरुष का लकड़ी के खम्भे से बन्धन किया जाता है। किन्तु यहाँ पर शुन:शेप के बन्धन करने में कोई भी आगे नहीं बढ़ा क्योंकि यह कर्म बहुत ही अमानवीय है। किन्तु यहाँ पर भी शुन:शेप के पिता अजीगर्त सौ गायों के बदले अपने पुत्र को लकड़ी के खम्भे से बंधन किया। परन्तु मारने में भी कोई आगे नही बढ़ा। क्योकि मनुष्य का वध करने में कोई भी उद्यत नहीं

टिप्पणी

था। वहाँ पर भी आङ्गिर ने धन के लोभ में अजीगर्त को पुत्र के वध करने के लिए उद्यत किया। देश के राजा श्रद्धेय ऋषियों के और अपने पिता के कठोर आचरण से भयभीत शुन:शेप ने देवो को स्मरण किया। यहाँ पर शुन:शेप ने अपने असीमधैर्य को स्थिर किया और मानसिक शूक्ति विद्या इत्यादि को अच्छी प्रकार से प्रकट किया। क्रम से प्रजापति ने वह्नि सविता वरुण विश्वदेव दोनों अश्विनि कुमारों की और इन्द्र इत्यादि देवों की अनेक प्रकार के मन्त्र से स्तुति और वन्दना की। और बलि के लिए मुक्ति की याचना की। किन्तु किसी ने भी उसकी सहायता नहीं की। अन्त में देवी उषा ममता क्रान्त शुन:शेप को छोड़ दिया। केवल इतना ही नहीं राजा का भंयकर उदररोग भी चला गया। बन्धन से शुन:शेप मुक्त हुआ। इस प्रकार रोहित शुन:शेप संवाद समाप्त हुआ।

उसके चित्त आकर्षक को तीसरे पर्व में आरम्भ करते हैं। शुन:शेप का विशिष्ट सामर्थ्य को देखकर अनुष्ठान कारि ऋत्विज आश्चर्य में पड़ गए। इन ऋत्विजो में प्रधान विश्वामित्र थे। वे शेष सभी याग के अवशेष भाग समाप्ति का भार शुन:शेप के लिए दिया। विश्वामित्र ने अत्यधिक स्नेह से उसे अपनी गोद में ग्रहण किया। और अपने पुत्ररूप से ग्रहण किया। उसका नाम देवरात वैश्वामित्र हुआ। इन सब को देखकर अजीगर्त ने पुन अपने पुत्रको वापस लौटाने के लिए विश्वामित्र को कहा - ''ऋषे पुनर्मे पुत्रं देहि'' इति। पुत्र जैसे वंश त्याग करके नही जाते वैसे ही प्रयत्न किये। किये कर्मो के करने पर वह आत्मा से रोष को प्रकट किया। और प्रयोजन होने पर तीस गाये और सौ पुत्रो को देने के लिए तैयार है। किन्तु तब शुन:शेप को मेरी बुद्धि स्वीकार नहीं करेगी। वह निर्दय पिता की कठोर भाषा से निन्दा की। उस प्रकार से आङ्गिरस शुन:शेप देवरात वैश्वामित्र हुआ।

यहाँ पर भी आख्यान समाप्त नहीं हुआ। महर्षि विश्वामित्र केवल शुन:शेप को पुत्ररूप से ग्रहण ही नहीं किया अपितु अपने सौ पुत्रों के मध्य में शुन:शेप को पचास पुत्रो से बड़े भाई के रूप में स्वीकार किया। ये पचास मधुच्छन्दा इसकी अपेक्षा से बड़े थे और अन्य पचास उसकी अपेक्षा से छोटे थे। देवरात वैश्वामित्र के शुन:शेप का स्थान मध्यवलृत था, मधुच्छन्दा के उपर। यहाँ पर ही समस्या का आरम्भ हुआ। जो मधुच्छन्दा इसकी अपेक्षा से बड़े थे, वे शुन:शेप को पुत्र के रूप में स्वीकार नहीं किया (न ते कुशलं मेनिरे)। इसलिए उन्होंने विद्रोह किया। उनके द्वारा उन सभी विद्रोहियों का विश्वामित्र ने अपने पुत्र के अधिकार से उन्हें वचित कर दिया। केवल इतना ही नहीं, कुलीनता के रहित होने से और विद्या के अभाव से वे क्रम से अधोगति को प्राप्त हुए। उनका वंश दस्यु कहलाया। ब्राह्मण ने उनका कुछ वंशपरिचय दिया -जैसे अन्ध्र, पुण्ड्र, शबर, पुलिन्द, मुतिब इत्यादि। अब ये कुछ इनमे से प्रदेश के नाम से अथवा कुछ जातिरूप से प्रसिद्ध है। अन्य पुत्रों के लिए विश्वामित्र के द्वारा आशीर्वाद की वर्षा हुई। वह उनके लिए धनवान वीरवान हो -इत्यादि अनेक प्रकार के आशीर्वाद दिया और वे ही विश्वामित्र के सम्पत्ती के उत्तराधिकारी होगे ये भी जान लिया गया। शुन:शेप द्वैत उत्तराधिकार को प्राप्त किया। उसने आङ्गिरस गाथी ये दोनों प्राप्त की। उसके दरिद्रता अध्यवसायनिष्ठाविद्याधैर्यसहिष्णुता इत्यादि गुण सार्थकमण्डित हुए।

चौदहवां पाठ समाप्त